International Journal of Applied Research 2021; 7(2): 456-458

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2021; 7(2): 456-458
www.allresearchjournal.com
Received: 25-12-2020
Accepted: 27-01-2021

गुड़िया चौधरी
सहायक प्रोफेसर, गुरु नानक महाविद्यालय, वेलाचेरी, चेन्नई, तमिलनाडु, भारत

Corresponding Author:
गुड़िया चौधरी
सहायक प्रोफेसर, गुरु नानक महाविद्यालय, वेलाचेरी, चेन्नई, तमिलनाडु, भारत

जीवन संघर्षों का विजेता बालक - श्यौराज

गुड़िया चौधरी

सारांश
जीवन एक संघर्ष है और हम सभी को इस संघर्ष को स्वीकार कर अपने जीवन में आगे बढ़ना होगा यहाँ तक कि प्रकृति के साथ, स्वयं के साथ, परिस्थितियों के साथ बिना संघर्षों का सामना किये हम नहीं रह सकते है। आए दिन हम सब को संघर्षों का सामना करना पड़ता है और इन से जूझना पड़ता है। जो इन संघर्षों का सामना करने से कतराते हैं वह जीवन से भी हार जाते हैं और जीवन भी उनका साथ नहीं देता। हर सफल इंसान की जिंदगी में एक संघर्ष की कहानी जरूर होती है इसलिए संघर्ष से हमें डरना नहीं चाहिए। यदि आप संघर्ष कर रहे हो तो समझ लीजिए आपकी सफलता दूर नहीं संघर्ष का दूसरा नाम ही सफलता है। इसी सन्दर्भ में डॉ. श्यौराज जी के संघर्ष को देख सकते है। मुझे लगता है हम इनके संघर्षों से प्रेरणा भी ग्रहण कर सकते है। अपने प्रारंभिक दिनों में जो संघर्ष श्यौराज जी ने किया और हार नहीं मानी इसी कारण हम सभी आज उन्हें एक मिशाल के रूप में देख रहे है कि कैसे एक बालक अपनी मासूमियत भरी नयनों में सपनों को संजोता है और उन्हें पूरा करने के लिए जी तोड़ मेहनत कर आख़िरकार सफलता की सीढ़ियों को पार करते हुए अपनी मंजिल तक पहुँचता हैं।

कूटशब्द: जीवन, संघर्ष, श्यौराज

प्रस्तावना
बाल मनोविज्ञान के अनुसार जब एक बालक अपनी माँ के गर्भ में आता है तभी से उसका संघर्ष शुरू हो जाता है अपने अस्तित्व को लेकर लेकिन जिस संघर्ष की बात हम कर रहे है वह है अपने अस्मिता एवं पहचान की, समाज जीवित रहने के लिए, अपने आहार की, अपने रहने के लिए आवास की अर्थात् सम्पूर्ण रूप से आत्मनिर्भर होकर अपने पालन-पोषण की संघर्ष की है। यदि बाल मनोविज्ञान की बात करे तो एक एक छोटे सें पांच-छह साल के बच्चे की जो मानसिक स्थिति होगी या होनी चाहिए ठीक उसके विपरीत हम श्यौराज जी की स्थिति को देखते है अर्थात् बचपन में ही संघर्ष का जज्बा और अपने आत्मसम्मान की रक्षा करने का भाव। संघर्ष वह भी अपने जीवन की रक्षा के लिये ,अपने अस्तित्व को कायम रखने के लिये, अपने भरण-पोषण को लेकर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। ऐसा संघर्ष जिसकी शुरुआत तो बचपन से ही हो जाती है किंतु उस संघर्ष का अंत या ठहराव नहीं दिखता।

बाल मनोविज्ञान के अनुसार प्रत्येक अवस्था के बालकों की मनोदशा प्रायः एक समान होती है किंतु हम श्यौराज जी की मनोदशा की बात करे तो वह उनकी बाल अवस्था के अनुकूल न होकर परिस्थितियों तियोंनुसार हमें दिखती है। बालक श्यौराज की बाल मनोदशा उनके पिता की मृत्यु से पहले अन्य बालकों की तरह ही थी किन्तु जैसे ही उनके

पिता की अकाल मृत्यु से हो जाती है उसी समय से उनके बाल मन की मन्हः स्तिथि एवं परिस्थितियों में अंतर दिखता हैं। बालक श्यौराज भी दूसरे बच्चों की भांति खेलना, पढ़ना चाहते हैं किंतु गरीबी और समय की मार से वह अपने आप को सक्षम नहीं कर पाते। जब वह दिल्ली में अपनी मौसी के पास रहते हुए नींबू बेचने का काम करते हैं तो उन्हें स्कूल नियमित रूप से जाने का एक अवसर प्राप्त होता है। उनके बाल मन में अनिश्चित मिश्रित ढेरों सवाल उठते हैं। जिस घड़ी की उन्हें तीव्रता से प्रतीक्षा थी जिस समय की वह घड़ी आ गई थी। दिल्ली में रहते हुए और काम करते हुए बालक श्यौराज बखूबी देख समझ रहे थे कि किस तरह पढ़-लिख कर ही लोग बड़े आदमी बनते हैं। उनके मन में आता है कि "मैं भी दूसरों की तरह साफ-सुथरे कपड़े पहनूँगा और आगे चलकर बड़े-बड़े काम करूंगा। पिछड़ गया हूँ बाकी के साथ चल भी पाऊंगा या नहीं? पढ़ाई में रात-दिन एक कर दूंगा। ऐसी बाल-सुलभ रंगीन कल्पनाएं मेरे हृदय में कूलबुला रही थी। तभी मन में कुछ और सवाल उठते थे, अगर मैं स्कूल में पढ़ूँगा तो रोटी कहां से आएगी, कपड़े कौन खरीदेगा, साबुन तेल का मेरा खर्चा कौन उठाएगा। मौसी जी पर बोझ क्यों बना जाए।"[1] यहाँ हम एक बच्चे की मानसिकता को भली भांति देख सकते हैं जो अपने निश्चित भविष्य को लेकर चिंतित होने के साथ - साथ अपना भरण पोषण भी कर रहा था अपने बचपन को अपने ही कंधों पर लेकर बालक श्यौराज के भविष्य के रास्ते की तलाश में किशोर वय की ओर बढ़ रहे कदम भले ही नन्हे थे और कल के रास्ते अपरिचित, उबड़-खाबड़ थे किंतु वह अपने साफ-सुथरे कर्म पथ पर दृढ़ रूप से अग्रसर थे।

बालक को बेशक किसी से भी अधिक न उम्मीद थी और न ही कोई मदद करने सामने आया किंतु इनके बचपन से किशोरावस्था के समय कुछ ऐसे लोग थे जो उन्हें जीवन पथ और कर्म पथ पर आगे बढ़ने की प्रेरणा देते थे। उन्हीं में से एक बालक के मौसा जी थे। वे श्यौराज जी के तुक्के वाले कविता को बड़े ध्यान से सुनते और उनके इस गुण और लक्षण की चर्चा करते हुए रैदास, कबीर वगैरह के किस्से सुनाने लगते और उन्हें उनके साथ संगति करते हुए कहते हैं "दुनिया में बड़ी-बड़ी प्रतिभाएं स्कूलों के बाहर से आई है।"[2] बालक श्यौराज जब समाज में ऐसे लोगों को देखता था जो कि कुछ नहीं करते फिर भी उनके पास सुख-सुविधाओं के सभी साधन है जबकि वे कमाते हैं फिर भी उन्हें रोटी भी मिलना मुश्किल है। ऐसे में भगवान से शिकायत रहती थी कि भगवान ने अमीरी गरीबी जैसी भेदभाव को क्यों बनाया है बालक श्यौराज के बाल मन को क्या पता की यह इंसानों के द्वारा बनाई गई परम्परा है। बालक हो या कोई भी व्यक्ति जब वह हालातों के हाथों मजबूर और विवश हो जाता है तो ऐसे में वह अपनी शिकायत ईश्वर से ही करता है।

जब बच्चे बाल्यावस्था के होते हैं उनके मन में किसी प्रकार का छल-कपट या झूठ बोलने की प्रवृत्ति नहीं होती है। ऐसे में वह बिल्कुल स्पष्टवादी होते हैं। इस समय बच्चों की ऐसी मानसिकता होती है कि वह जो करता है उसे सभी को बताना चाहता है अर्थात् यदि कुछ अच्छा खाता है, पहनता है तो वह अपने आस-पास के लोगों को बताने के लिए आतुर रहता है, ठीक उसी प्रकार बालक श्यौराज रायपुर से काम कर डेढ़-दो महीने बाद गाँव लौटने पर तोड़ी ताऊ जब बालक श्यौराज से उनकी रायपुर के काम के विषय में पूछते हैं और उन्हे जब उनकी मजदूरी का हिसाब करते हुए चालीस रुपये उन्हें देते हैं और जैसे ही तोड़ी ताऊ को पता चलता है कि बालक श्यौराज रायपुर में रोज दावतें खाता था। खाने की अच्छी-अच्छी चीजें उसे मिलती है तो वह तुरंत बालक श्यौराज के हथेली पर चालीस रुपये में से पंद्रह रुपये कम करके मात्र पच्चीस रुपये दे देते हैं। यह कह कर कि वहाँ मैंने काम करने के लिये भेजा था, दावतें खाने नहीं। उस समय वह बालक ताऊ का मुंह ताकता रह जाता है। क्या करता, अपनी बाल मासूमियत और स्पष्टवादीता बोल वचन का फल उसे मिल चुका था और चाह कर भी कुछ नहीं कर सका। उस बच्चे को क्या पता कि यह स्पष्टवादिता उसके लिए कितनी भारी पड़ेगी। जबकि न्यौता का कोई लेना देना नहीं था उसके काम से। कहां तो वह बालक अपनी खुशी जाहिर कर रहा था उसे क्या पता कि उसकी मेहनत की कमाई में से भी पैसे काट लिए जाएंगे।

बच्चे अपने दोस्तों के साथ खेलते हुए कुछ शैतानीयाँ, गलतियां, शरारतें करते हैं किन्तु कभी- कभी वे झूठ बोलना, यूँ नटखटपन में चोरी करने जैसे कामों को अंजाम देने लगते हैं। यह भी बाल मनोविज्ञान का ही हिस्सा हैं जहाँ वे क्या करते हैं समझ नहीं पाते। एक दिन श्यामलाल, राम सिंह और बालक श्यौराज श्मशान के पास खेल रहे थे। तभी उनकी नजर कांसे के कटोरे पर पड़ी और उनके बाल मन में उस कटोरे को चुराने की बात आती है कि यह कटोरा तो एक-डेढ़ रुपया में जरूर बिक जाएगा और वे कटोरा चुरा लेते हैं किंतु बँटवारे में फैसला नहीं हो पाता है कि कटोरा कौन लेगा या कटोरे की चार-चार आने दो लोग ले और तीसरा कटोरा अपने पास रखें। बेईमानीपूर्ण बंटवारे के प्रश्न पर विवाद होता है और फिर हंगामा। सबको यह बात पता चल जाती है, कटोरा तो

लौटना ही पड़ा, ऊपर से इन तीनों की पिटाई भी हुई सो अलग। चूँकि बालक श्यौराज लावारिस था इसलिए गाँव का हर कोई उसके गालों पर चांटे मार रहा था और वह सिवाय रोने के कुछ भी नहीं कर पा रहा था वहीं रामसिंह और श्यामलाल के साथ उनके माँ-बाप खड़े थे। बालक श्यौराज की अवस्था ठीक वैसी ही थी जैसे- "गरीब की लुगाई, गाँव भर की भौजाई "3 अर्थात् जो चाहे उससे भद्दे मजाक कर चले जाए। कोई बोलने वाला नहीं। उसी तरह बालक श्यौराज को भी सब चाँटे मार रहे थे कोई कुछ पूछने वाला नहीं था। बचपन में ही गठिया बाय के बीमारी से ग्रसित थे और ऐसी अवस्था में अपाहिजो जैसी स्तिथि में कभी नदरौली तो कभी पाली, कभी डिबाई, कभी मिर्जापुर में रहकर अपना जीवन यापन करने की कोशिश की और समय-समय पर बालक श्यौराज को वहां से पलायन करना पड़ा कभी मज़बूरी में कभी आवश्यकता के कारण। ऐसी स्तिथि में यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि –

"खाली पेट नंगे पाँव, चला मैं जाने कितने गाँव,
कभी नंदरौली, कभी पाली, कभी डिबाई तो कभी मिर्जापुर।
कहीं न मिली मुझकों छाव, रहा सदा मैं आशावान,
चला में लेकर अपना बचपन अपने कंधों पर, खाली पेट नंगे पाँव।

निष्कर्ष रूप में हम देख और समझ सकते हैं कि बच्चों के बाल मन पर उनकी परिस्थितियों का अनुकूल प्रभाव पड़ने लगता है। बाल समस्याएं या समाधान की बात की जाए तो वह निश्चित रूप से बाल मनोविज्ञान के अंतर्गत ही आएगी। बचपन से ही बच्चे पर प्रत्येक क्रिया और प्रतिक्रिया का प्रभाव पड़ने लगता है। वह समाज में रहकर इन्हें आत्मसात करता है और प्रतिकुल परिस्थितियों से उसमें शांतशीलता और सहन क्षमता का विकास होता है जिसकी झलक उसके व्यवहार में भी दिखाई पड़ती है। चाहे वह आत्मसम्मान की बात हो या अपनी पहचान की। समाज में रहते हुए बच्चा अपनी जीजिविषा के द्वारा सीखता है एवं उसका मानसिक एवं शारीरिक विकास होता है। ऐसे में यदि कुछ बच्चों में सयम का अभाव रहता है तो वे गलत राह पकड़ लेते है और जिन कन्धों पर देश का भविष्य टिका है ऐसे में वह लड़खड़ा नहीं जायेगा तो क्या होगा। गौरतलब है कि विषम से विषम परिस्थितियों में भी बालक श्यौराज ने कभी हार नहीं मानी और तमाम मुश्किलों का सामना कर उन्होंने सिद्ध कर दिया कि यदि व्यक्ति दृढ़ संकल्पि हो तो वह कुछ भी कर सकता है। इस प्रकार हम देखते है कि अपने जीवन संघर्षों को जीत कर विजेता बालक श्यौराज वर्तमान समय में सबका प्रेरणा स्रोत बना हुआ है। यह कहानी सिर्फ बालक श्यौराज की नहीं है बल्कि कहीं न कहीं हजारों लाखौं बच्चों की कहानी है जो समाज में शोषित हो अपने बचपन को खो रहे । अपने बचपन की ऐसी भयावह तस्वीर को शायद ही कोई याद करना चाहेगा गौरतलब है कि सिर्फ यही कहा जा सकता है –

मैं भूल गया अपना बचपन
"नहीं याद करना मुझे मेरा क्रंदन
घूमता रहा फुटपाथों पर, लेकर अपना बचपन
न मित्र बने, न सहपाठी स्वयं
दोनों की भागीदारी निभाई।"
मुझे उम्मीद है विश्वास है कि ऐसे व्यक्तित्व के

धनी सभी बालकों के अन्दर कुछ कर गुजरने की आपर क्षमता है जरूरत हैं तो सिर्फ उन्हें सही राह दिखाने की और उनकी मदद करने की मैं अपनी लेखनी के माध्यम से सभी पाठक वर्ग से निवेदन करती हूँ की यदि किसी को यह मौका मिल रहा है किसी बालक के स्वर्णिम भविष्य को बनाने में तो जरुर उसके सहभागी बने। अंत में मैं यही कहना चाहुँगी –

विकल्प बहुत मिलेंगे, मार्ग भटकाने के लिए .....
लेकिन संकल्प एक ही काफी है,
मंजिल तक जाने के लिए।

संदर्भ

1. श्यौराज सिंह 'बेचैन'- "मेरा बचपन मेरे कंधों पर" (आत्मकथा) -पृ.सं. -206
2. श्यौराज सिंह 'बेचैन'- "मेरा बचपन मेरे कंधों पर" (आत्मकथा)- पृ.सं .-224
3. प्रसिद्ध लोकोक्ति